प्रथम अध्याय

# विषय प्रवेश : जैनागमों में उपासकदशाङ्गसूत्र

## (क) भारतीय वाङ्मय में जैनागम

भारतीय वाङ्मय में वेद, वेदांग, उपनिषद् एवं पुराण साहित्य आता है। इसके अतिरिक्त षड्दर्शन एवं जैन-बौद्ध समस्त साहित्य को भारतीय वाङ्मय से पहचाना जाता है, जिसमें जैनागम का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

ये समग्र भारतीय संस्कृति की अमूल्य निधि हैं। जीवन के क्षेत्र में नया स्वर-संधान करने वाले आगम नया ओज लिए हुए हैं। अत: आगम जैनों के वेद ही हैं।

सम्यग्ज्ञान को प्राप्त करने और मिथ्यादृष्टि के निवारणार्थ यदि कोई प्रमुख साधन हैं, तो वे हैं-आगम ग्रन्थ। आगम वह शक्ति विशेष हैं, जिसके माध्यम से पदार्थों के सम्मुख उपस्थित न होने पर भी उनका और इन्द्रियातीत पदार्थों का यथार्थ बोध हो जाता है।

वैदिक वाङ्मय में जैसे वेदों को 'श्रुत' बतलाया गया है, वैसे ही जैन वाङ्मय में भी आगमों को भी श्रुत तथा आप्त वचन आदि सार्थक पदों से अभिहित किया गया है। अत: सर्वप्रथम आगम का अर्थ क्या है और वे कितने प्रकार के हैं? इत्यादि प्रश्नों पर यहाँ प्रकाश डाला जा रहा है।

### 1. आगम पद एवं उसके पर्यायवाची शब्द

आगम पद 'आ' उपसर्ग पूर्वक गम् धातु में घञ् प्रत्यय के लगने से निष्पन्न हुआ है।[1] यहाँ 'आ' पूर्ण अर्थ को प्रकट करता है जबकि गम् का अर्थ है-गति अथवा प्राप्ति। कुछ एक विद्वान् गम् का अर्थ बोध अथवा ज्ञान भी कहा है जैसे कि -

---

1. (आप्टे) संस्कृत हिन्दी कोष, पृ० 139

कोश ग्रन्थों में आगम को श्रुत बतलाते हुए उसके कतिपय पर्यायवाची शब्दों का उल्लेख किया गया है, जिसमें कुछ विशेष हैं–आगमन, आप्त वचन एवं ज्ञान आदि।[1]

अनुयोगद्वार सूत्र में आगम के लिए सूत्र, ग्रन्थ, सिद्धान्त, प्रवचन, आज्ञा वचन, उपदेश और प्रज्ञापना आदि शब्द उल्लिखित मिलते हैं।[2] इनमें से उपदेश, प्रवचन, जिनवचन, ग्रन्थ, सिद्धान्त, आज्ञावचन और प्रज्ञापना पद अधिक सुबोध्य हैं, यहाँ हम आगमन, आप्तवचन, ज्ञान, श्रुत, सूत्र एवं शास्त्र पदों को जैन दृष्टि से स्पष्ट करना समुचित समझते हैं। पाइअ सद्द महण्णवो में आगम का अर्थ शास्त्र या सिद्धान्त बतलाया गया है।[3]

### आगमन एवं आगम

तीर्थंकर भगवान् की वाणी को गणधरों ने, गणधरों से उनके शिष्यों ने और पुनः अनुक्रम से शिष्य-प्रशिष्यों ने ग्रहण किया। अतः गुरु शिष्य परम्परा से आने वाले (आगमन) ज्ञान विशेष को ही आगम कहते हैं। गुरु परम्परा से जो ज्ञान अविच्छिन्न गति से चला आ रहा है, वह भी आगम ही है।[4] आचार्य परम्परा के अनुसार जो श्रुतज्ञान आया है, आ रहा है, वह आगम कहलाता है।[5]

### आप्त वचन एवं आगम

आगम आप्तवचन विशेष है[6] इस तरह आप्त वचनों से आविर्भूत होने वाला अर्थसंवेदन ही वस्तुतः आगम है।[7]

1. वही, पृ० 140.
2. तस्स णं इमे एगट्ठिया नाणाघोसा नाणावंजणा नामधेज्जा भवन्ति।
   तंजहा-सुय सुत्त गंथ सिद्धंत सासणे आण वयण उवदेसे।
   पण्णवण आगमे या एगट्ठा पज्जवा सुत्ते।।
   अनु०सू०, पृ० 38.
3. पा०स०म०, पृ० 11.
4. गुरु पारम्प्रयेणागच्छतीति आगमः।
   अनु०सू० 219/5
5. आचार्य पारम्प्रयेणागतः इति आगमः।
   अनु०सू०, 38.
6. आप्त वचनं वा। वही.
7. आप्तवचनादाविर्भूतमर्थसंवेदनमः। उपचारादाप्तवचनं च
   प्र०नय०त०, 4/1, 2



### ज्ञान एवं आगम

जिनके द्वारा पूर्ण रूप से जीवादि पदार्थों को जाना जाता है, उनका बोध होता है, उनका ज्ञान किया जाता है, वही आगम विशेष है।[1] जैनेतर सिद्धान्त है। व्यास भाष्य में आप्त द्वारा दृष्ट और अनुभूत ज्ञान को आगम कहा गया है।[2] अतः केवल ज्ञानी, मनः पर्यय ज्ञानी, अवधिज्ञानी, चतुर्दश पूर्वधर, दशपूर्वधर और नवपूर्वधरों के द्वारा ज्ञात एवं रचित वाणी चिन्तन व ज्ञान आगम कहलाते हैं। परीक्षामुख में आचार्य माणिक्यनन्दि आप्त वचन आदि से होने वाले पदार्थज्ञान को ही आगम मानते हैं।[3]

### श्रुत एवं आगम

श्रुत का अर्थ है–श्रवण करना। जो गुरु के मुख से सुना जाए, वह श्रुत है। भगवान् महावीर के उपदेश उनके शिष्य गणधरों ने श्रवण किए और गणधरों से उनके शिष्यों ने, इस प्रकार शिष्य-प्रशिष्यों के श्रवण द्वारा प्रवर्तित होने वाली भगवान् महावीर की देशना वा वाणी को श्रुत कहा गया है। आवश्यक निर्युक्ति में जैसे कहा भी गया है–

अत्थं भासइ अरहा, सुतं गन्थन्ति गणहरा निउणं।
सासणस्य हियट्ठाए तओ सुतं पवत्तइ।।[4]

### सूत्र एवं आगम

जो गणधर, प्रत्येक बुद्ध, श्रुतकेवली और अभिन्न दशपूर्वधारी के द्वारा प्रतिपादित की गई हो[1] वह तीर्थंकर की देशना 'सूत्र' इस शब्द से भी ख्यात है।

आगम के लियए सूत्र पद का उल्लेख करते हुए आवश्यक निर्युक्ति में भी लिखा गया है कि जो ग्रन्थ प्रमाण से अल्प और अर्थ की अपेक्षा महान् हैं, बत्तीस दोषों से रहित हैं, लक्षण तथा आठ गुणों से सम्पन्न होते हुए जो अनुयोगों सहित

1. आ समन्ताद् गम्यन्ते ज्ञायन्ते जीवादयं पदार्थाः अनेनेति।
   अनु०सू०, 219/5
2. आप्तेन दृष्टोऽनुमितो वाऽर्थः परत्र स्वबोधङ्क्रान्त्य शब्देनोपदिश्यते,
   शब्दात् तदर्थ विषयावृतिः श्रोतुरागमः।।
   पात०योग०, 1/7
3. आप्तवचनादि निबन्धनमर्थज्ञानमागमः। परीक्षा०, 3/95
4. आव०नि०-गाथा, 193.

व्याकरण विहित,[1] निपातों से रहित और अनिंद्य है, वह सर्वज्ञ कथित वचन ही सूत्र हैं।[2]

### शास्त्र एवं आगम

चौदह पूर्वधर के धारण करने वाले आचार्य 'शास्' धातु का अर्थ अनुशासन करते हैं और 'त्रैङ्' धातु को सभी शब्दवेत्ताओं ने 'पालन' अर्थ में सुनिश्चित किया है। इसलिए रागद्वेष से जिनके चित्त व्याप्त हैं, उन्हें जो सद्धर्म में अनुशासित करता है और दु:ख से बचाता है, विद्वानों ने उसे ही शास्त्र कहा है।[3]

### शासन एवं आगम

जिसके द्वारा अनन्त धर्मों से विशिष्ट जीवादि पदार्थ समस्त रूप से जाने जाते हैं, ऐसी आप्त आज्ञा ही आगम है और यही शासन भी कहलाते हैं।[4]

इस तरह जैनदर्शन में आगमों को सर्वाधिक बहुमान दिया गया है और जैन परमेष्ठी तुल्य इनकी अर्चा करते हैं।

---

1. सुत्तं गणधरकधिद तहेव पत्तेयबुद्धकधिकं च।
   प्रत्येक बुद्ध और तीर्थङ्कर आदि।
   सुदकेवलिणाकधिदं अभिण्णदसपुव्विंकधिदं च।।
   मूला०, 5/80
2. अप्पग्गंथ महत्थं बतीसा दोसविरहियं जं च।
   लक्खणजुत्तं सुत्तं अट्ठेहिं गुणेहिं उववेयं।
   अप्पक्खरमसंदिद्ध च साखं विस्सओ मुहं।
   अत्थोभभणवज्जं च सुत्तं सव्वण्णुभासियं।।
   आ०नि०, 880, 96
3. शास्विति वाग् विधिविद्धिर्धातु: पापठ्यतेऽनुशिष्यत्यर्थ:
   त्रैङिति च पालनार्थे विनिश्चित: सर्व शब्दाविदाम्।
   यस्माद् रागद्वेषोद्धत-चित्तान् समनुशास्ति सद्धर्मे।
   संत्रायते च दु:खाच्छास्त्रमिति निरुच्यते सद्भि:।।
   प्रशम०, 186, 187
4. आसमस्त्येनानन्तधर्मविशिष्टतया ज्ञायन्तेऽवबुद्धयन्ते जीवाजीवा
   दय: पदार्था: यया सा आज्ञा आगम: शासनम्।।
   स्याद्वाद०, 21/262/7



### 2. आगम संगायन

काल दोष और प्राकृतिक प्रकोप के कारण श्रुतज्ञान (आगम) विच्छिन्न होता जा रहा था, जिसे ध्यान में रख जैनाचार्यों ने श्रुतज्ञान के संगायन की बात सोची। इस प्रकार वीर निर्वाण के लगभग एक हज़ार वर्ष तक नए प्रकरण रचे गए, ज्ञान को संगठित किया जाता रहा, जिन्हें आगमों में स्थान मिलता गया। यह कार्य निम्न वाचनाओं में जैसा सम्पन्न हुआ, वह इस प्रकार है :-

### पाटलिपुत्र वाचना

वीर निर्वाण सम्वत् 160 के आसपास मगध में 12 वर्ष का भयंकर दुष्काल पड़ा[1] जिससे जैन श्रमण संघ दुर्भिक्ष की स्थिति में सुदूर प्रदेशों में चले गए। दुर्भिक्ष समाप्त होने पर मगध की राजधानी पाटलिपुत्र में आर्य स्थूलिभद्र के नेतृत्व में एक परिषद् बैठी, जिसका सर्वप्रथम उल्लेख तित्थोगाली में प्राप्त होता है।[2] यह वाचना पाटलिपुत्र के नाम से पुकारी जाती है। उस परिषद् में ग्यारह अंगों का संकलन सर्वसम्मति से किया गया, किन्तु बारहवें अंग दृष्टिवाद का ज्ञान किसी को भी नहीं था, जिससे उसका संगायन अधूरा रह गया। इन दिनों दृष्टिवाद के एकमात्र अध्येता आचार्य भद्रबाहु थे जो उस समय 12 वर्ष के लिए महाप्राण नामक तप करने पाटलिपुत्र से बाहर नेपाल की गिरि-कंदराओं में विराजमान थे। संघ के अत्याग्रह पर आचार्य भद्रबाहु ने स्थूलिभद्र को 10 पूर्वों का सांगोपांग और शेष 4 पूर्वों का ज्ञान शब्द रूप में ही दिया।[3] इस वाचना में ज्ञान एकत्रित तो कर लिया गया, पर इस ज्ञान को लेख बद्ध न कर स्मृति पटल में ही रखा गया।

### उड़ीसा वाचना

आगम संकलन का द्वितीय प्रयास वीर-निर्वाण संवत् 300-330 वर्ष के बीच हुआ। यह वाचना उड़ीसा के सम्राट खारवेल के काल में हुई थी। इस वाचना के सन्दर्भ में विशेष जानकारी प्राप्त नहीं होती है। मात्र यही ज्ञात होता है कि इसमें श्रुत के संरक्षण का प्रयत्न किया गया था। हिमवन्त थेरावली के अतिरिक्त अन्य किसी जैन ग्रन्थ में इस सम्बन्ध में उल्लेख नहीं है। खण्डगिरि और उदयगिरि में इस सम्बन्ध

---

1. परि०पर्व, 8/193, 9/55, 58
2. तित्थो०, 714
3. अह भणइ थूलभद्दो अण्णं रूवं न किंचि कहामो इच्छामि
   जाणिउं जे, अहं चत्तारि पुव्वाइं।। तित्थो०, 800

में जो विस्तृत लेख उत्कीर्ण है, उससे स्पष्ट परिज्ञात होता है कि उन्होंने आगम वाचना के लिए सम्मेलन किया था।[1]

### माथुरी वाचना

मथुरा नगर में सम्पन्न धर्म सभा को माथुरी वाचना से जाना जाता है, जिसका समय विद्वानों ने वीर निर्वाण सम्वत् 827-840 निश्चित किया है। इस वाचना के प्रमुख आयोजक थे-आर्य स्कन्दिल।[2] इस अवसर पर जिस-जिस मुनि अथवा साधु को जैसा जितना श्रुत स्मरण था, उसे उसी रूप में संकलित कर सुव्यवस्थित आगम का स्वरूप दिया गया था। फिर भी ऐसा माना जाता है कि उस समय कालिक श्रुत और अवशिष्ट पूर्व श्रुत का संगायन किया गया था। इस वाचना की प्रवृत्ति पूर्व जैसी ही रही कारण यह कि इस वाचना में भी श्रुत वाङ्मय लेखबद्ध न होकर कण्ठस्थ ही बना रहा। दलसुख मालावणिया के अनुसार इस वाचना के फलस्वरूप आगम लिखे भी गए।[3]

### वल्लभी वाचना : ( प्रथम )

जिस समय माथुरी वाचना चल रही थी, उन्हीं दिनों वल्लभी में आचार्य नागार्जुन सूरि के नेतृत्व में श्रमण संघ पुनः एकत्र हुआ और उन्होंने फिर से आगमोद्धार किया।[4] यह वाचना 'नागार्जुनीय वाचना' के नाम से विख्यात है। इस वाचना का समय वीर निर्वाण सम्वत् 830 तय किया गया है, जिसका उल्लेख भद्रेश्वर रचित कहावली ग्रन्थ में मिलता है।[5]

वाचना में आचार्य नागार्जुनसूरि और अन्य श्रमणों को जो आगम और आगमावशेष कण्ठस्थ थे, उन्हें पूर्वापर सम्बन्ध पूर्वक लिपिबद्ध जोड़ा गया।

### वल्लभी वाचना : ( द्वितीय )

उपर्युक्त वाचनाओं के लगभग 150 वर्ष बाद श्रमण संघ पुनः वल्लभी में

1. (सा० संघमित्रा) जै०ध०प्र०आ०, पृ० 10-11
2. इत्थ दूसहदुब्भिक्खे दुवालसवारिसिए नियत्ते सयलसंघं मेलिअ आगमाणओगो पवित्तिओ खांदिलायरियेण विविध, पृ० 19.
3. दे०आ०यु०जै०द०, पृ० 18
4. भा०सं०जै०चो०, पृ० 55
5. (मालवणिया, पं० दलसुख) जै०द०आ०, पृ० 7



एकत्रित हुआ। इस वाचना में अब तक और भी जितना श्रुत स्मृति में था, उसे पुनः संशोधित कर लेखन की सीमाओं में बांध दिया गया। इस वाचना में प्रमुख योगदान देवद्धिगणी क्षमाश्रमण का था। उन्होंने ही श्रुत को सुव्यवस्थित स्वरूप प्रदान किया।[1] कहीं-कहीं ऐसा भी उल्लेख मिलता है कि आचार्य स्कन्दिल एवं नागार्जुन के समय में ही आगम पुस्तका-रूढ़ कर दिए गए थे।[2]

उक्त वाचना में माथुरी और नागार्जुनी वाचनाओं का समन्वय तो किया ही गया था, किन्तु जैन आगमों का यह अन्तिम और स्थिर स्वरूप था। जो आज तक उसी रूप में हमें उपलब्ध होता है।

## 3. आगम भेद

समवायांग सूत्र में जैनागमों का सर्वप्रथम वर्गीकरण पूर्व एवं अंग के रूप में प्राप्त होता है।[3] अंग शब्द जैन परम्परा में आगम ग्रंथों के लिए प्रयुक्त हुआ है। आचार्य अभयदेव के मतानुसार बारह अंगों से पूर्व 'पूर्व' साहित्य रचा गया था। कुछ चिन्तकों का मत है कि महावीर के पूर्ववर्ती साहित्य को पूर्व कहा जाता है। जो कुछ भी रहा है, यह तो निश्चित है कि पूर्वों की रचना द्वादशांगी से पूर्व हो चुकी थी।

आगमों का वर्गीकरण देवर्धिगणि क्षमाश्रमण के काल अर्थात् वीर निर्वाण के 980-1000 वर्ष के आसपास का है, जिसमें अंग प्रविष्ट व अंग बाह्य-ये दो भेद किए गए हैं।[4]

### अंग प्रविष्ट

तीर्थंकर भगवन्तों द्वारा अर्थ रूप में और गणधरों द्वारा शब्द रूप में रचित साहित्य अंग प्रविष्ट कहा जाता है।[5] अंग प्रविष्ट के विषय में जिनभद्रगणी क्षमाश्रमण ने बताया है कि जो गणधर द्वारा प्रश्न करने पर तीर्थंकर द्वारा प्रतिपादित हो और जो शाश्वत सत्यों से सम्बद्ध होने के कारण ध्रुव एवं सुदीर्घकालीन हो, वह अंग प्रविष्ट

1. (सं० मधुकर मुनि) स्था०सू० प्रस्तावना, पृ० 27
2. जिनवचनं च दुष्यमाकालवशादुच्छिन्न प्रायमिति मत्वा भगवद् भिर्नागार्जुन स्कन्दिलाचार्य्य-प्रभृतिभिः पुस्तकेषु न्यस्तम्।
   योग०, प्रकाश 3, पृ० 207
3. सम०सू०, सम० 14, 136
4. न०सू०, 43-44
5. तत्त्वा०स्वो०, 1/20

श्रुत कहलाता है।[1] नन्दी सूत्र[2] में आगमों का वर्गीकरण करते हुए अंग प्रविष्ट के मुख्य द्वादश भेदों की गणना की गयी है–1. आचारांगसूत्र, 2. सूत्रकृतांगसूत्र, 3. स्थानांसूत्र, 4. समवायांगसूत्र, 5. व्याख्याप्रज्ञप्तिसूत्र, 6. ज्ञाताधर्मकथासूत्र, 7. उपासकादशांगसूत्र, 8. अन्तकृद्दशासूत्र, 9. अनुत्तरौपपातिकसूत्र, 10. प्रश्नव्याकरणसूत्र, 11. विपाकसूत्र, 12. दृष्टिवादसूत्र।

### अंग बाह्य

अंगेतर ग्रन्थ अंग बाह्य कहलाते हैं। तत्त्वज्ञों की दृष्टि में जो गणधरों के विशुद्ध एवं विशिष्ट बुद्धि एवं शक्ति सम्पन्न श्रुतधर अथवा पूर्वधर आचार्यों द्वारा काल, संहनन आदि दोषों के कारण अल्पबुद्धि शिष्यों के अनुग्रहार्थ रचे गए ग्रन्थ विशेष अंग बाह्य बतलाए गए हैं।[3] यह अंग बाह्य साहित्य दो भागों में विभक्त मिलता है :–1. आवश्यक और 2. आवश्यक व्यतिरिक्त।

### 1. आवश्यक

यहाँ प्रथम भाग आवश्यक के अन्तर्गत उसके छह[4] भेदों की गणना की गई है। वे हैं :–1. सामायिक, 2. चतुर्विंशति स्तव, 3. वन्दना, 4. प्रतिक्रमण, 5. कायोत्सर्ग, और 6. प्रत्याख्यान।

### 2. आवश्यक व्यक्तिरिक्त

इसके भी दो भेद किए गए हैं :–कालिक और उत्कालिक।[5]

---

1. गणहर थेरकयं वा आएसा मुक्क वागरणओ वा।
   ध्रुव चल विसेसओ वा अंगाणंगेसु नाणत्तं।।
   विशेषा०, गा० 552
2. न०सू०, 44
3. गणधरानन्तर्यादिभिस्त्वत्यन्त विशुद्धागमै: परम प्रकृष्ट वाङ्मिति शक्तिभिराचार्यै: कालसंहननायुर्दोषादल्प शक्तीनां शिष्याणामनुग्रहाय तत्प्रोक्तं तदंगबाह्यम्।।
   तत्त्वा०स्वो०, 1/20
4. न०सू०, 43
5. वही, 43



### कालिक

जो दिन और रात्रि के पहले और अंतिम पहर में पढ़े जाते हैं, वे कालिक सूत्र कहलाते हैं।[1] नन्दी सूत्र के अनुसार कालिक सूत्रों के अन्तर्गत इक्कतीस ग्रन्थ आते हैं वे हैं–1. उत्तराध्ययन, 2. दशाश्रुतस्कन्ध, 3. कल्पवृहत्कल्प, 4. व्यवहार, 5. निशीथ, 6. महानिशीथ, 7. ऋषिभाषित, 8. जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति, 9. द्वीपसागर प्रज्ञप्ति, 10. चन्द्रप्रज्ञप्ति, 11. क्षुद्रिका विमान प्रविभक्ति, 12. महल्लिका विमान प्रविभक्ति, 13. अंगचूलिका, 14. वर्गचूलिका, 15. विवाहचूलिका, 16. अरुणोपपात, 17. वरुणोपपात, 18. गरुडोपपात, 19. धरणोपपात, 20. वैश्रमणोपपात, 21. वेलन्धरोपपात, 22. देवेन्द्रोपपात, 23. उत्थानश्रुत, 24. समुत्थानश्रुत, 25. नागपरिज्ञापनिका, 26. निरयावलिका, 27. कल्पिका, 28. कल्पावतंसिका, 29. पुष्पिता, 30. पुष्पचूलिका, 31. वृष्णिदशा। इसके अलावा मान्यतानुसार 84 हज़ार प्रकीर्णक भगवान् श्री ऋषभदेव स्वामी और संख्याता प्रकीर्णक 2 से 23 तक के तीर्थंकरों के तथा 14 हज़ार प्रकीर्णक चौबीसवें तीर्थंकर के[2] कालिक श्रुत के रूप में स्वीकार किए हैं।

### उत्कालिक

जिनका कालवेला वर्जनकर अध्ययन किया जाता है, वे उत्कालिक कहलाते हैं।[3] अभिप्राय यह कि अस्वाध्याय अर्थात् स्वाध्याय के समय को छोड़कर जो दिन और रात्रि में पढ़े जाते हैं,[4] वे उत्कालिक ग्रन्थ हैं। उत्कालिक ग्रन्थों की संख्या 29 बतलायी गयी है। वे इस प्रकार हैं :–

1. दशवैकालिक, 2. कल्पाकल्पक, 3. चुल्लकल्पश्रुत, 4. महाकल्प श्रुत, 5. औपपातिक, 6. राजप्रश्नीक, 7. जीवाभिगम, 8. प्रज्ञापना, 9. महाप्रज्ञापना, 10. प्रमादाप्रमाद, 11. नन्दी, 12. अनुयोगद्वार, 13. देवेन्द्रस्तव, 14. तन्दुलवैचारिक, 15. चन्द्रविद्या, 16. सूर्यप्रज्ञप्ति, 17. पौरुषीमण्डल, 18. मण्डल प्रवेश, 19. विद्या चरण निश्चय, 20. गणिविद्या, 21. ध्यानविभक्ति, 22. मरण विभक्ति, 23. आत्मविशुद्धि, 24. वीतरागश्रुत, 25. संलेखनाश्रुत, 26. विहारकल्प, 27. चरणविधि, 28. आतुरप्रत्याख्यान, 29. महाप्रत्याख्यान।

---

1. यद्दिवसनिशाप्रथमपश्चिमपौरुषीद्वय एव पठ्यते तत्कालिकम्।।
   न०सू०, पृ० 283
2. न०सू० 43
3. बत्तीस अस्वाध्याय काल: दे०ने०सू० (मुनि आत्मा राम)
4. यत्पुन: कालवेलावर्ज्यं पठ्यते तदुत्कालिकम्।।
   न०सू०, पृ० 283

उपरोक्त विभाजन में बहुत से ग्रन्थ अब उपलब्ध नहीं हैं। अंगों में बारहवें अंग दृष्टिवाद का लोप हो चुका है। इस समय श्वेताम्बर मान्यतानुसार आगमों की संख्या 32 हैं, जिसका विभाजन निम्न प्रकार से मिलता है :–

( क ) ग्यारह अंग[1] –

1. आचारांगसूत्र, 2. सूत्रकृतांगसूत्र, 3. स्थानांगसूत्र, 4. समवायांगसूत्र, 5. व्याख्याप्रज्ञप्तिसूत्र, 6. ज्ञाताधर्मकथांगसूत्र, 7. उपासकदशांगसूत्र, 8. अन्तकृद्दशांकसूत्र, 9. अनुत्तरौपपातिकसूत्र, 10. प्रश्नव्याकरणसूत्र, 11. विपाकसूत्र।

( ख ) बारह उपांग

1. औपपातिकसूत्र, 2. रायप्रश्नीयसूत्र, 3. जीवाभिगमसूत्र, 4. प्रज्ञापनासूत्र, 5. जम्बूद्वीपप्राप्तिसूत्र, 6. चन्द्रप्रज्ञप्ति, 7. सूर्यप्रज्ञप्तिसूत्र, 8. निरयावलिकासूत्र, 9. कल्पवतंसिकासूत्र, 10. पुष्पिकासूत्र, 11. पुष्पचूलिकासूत्र, 12. वृष्णिदशासूत्र।

( ग ) चार मूल

1. दशवैकालिकसूत्र 2. उत्तराध्ययनसूत्र, 3. नन्दीसूत्र, 4. अनुयोगद्वारसूत्र।

( घ ) चार छेद

1. दशाश्रुतस्कन्ध सूत्र, 2. वृहत्कल्पसूत्र, 3. व्यवहारसूत्र, 4. निशीथसूत्र।

आवश्यक सूत्र = 11 + 12 + 4 + 4 + 1 = 32

### विषयानुसार आगमों का वर्गीकरण

आर्यरक्षित ने आगमों को विषय की दृष्टि से विभाजित किया है। इस विभाजन क्रम को उन्होंने अनुयोग नाम दिया और सर्व शास्त्रों को चार अनुयोगों में विभक्त किया है। सर्वप्रथम अनुयोग शब्द पर विचार करते हैं कि यह अनुयोग क्या है ?

अनुयोग पद अनु उपसर्ग पूर्वक युज् धातु में घञ् प्रत्यय लगने से निष्पन्न हुआ है। जिसका अर्थ है–

1. अंगपविट्ठं दुवालसविहं पण्णत्तं, तंजहा–आयारो, सूयगडो,
ठाणं, समवाओ, विवाहपन्नत्ती, नायाधम्मकहाओ, उवासगदसाओ,
अंतगडदसाओ, अणुत्तरोववाइयदसाओ, पण्हावागरणाइं,
विवाग सुयं, दिट्ठिवाओ।।
न०सू०, 44



धार्मिक चिन्तन।[1] कुछ एक विद्वान् अनुयोग का अर्थ भगवान् महावीर स्वामी के द्वारा प्रतिपादित धर्म विशेष करते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि अर्थ का विरोध रहित तदनुरूप कथन करना अनुयोग है।

आवश्यक निर्युक्ति में भी इसका विवेचन करते हुए बतलाया गया है कि ईसा की 5वीं शताब्दी से लेकर 15वीं शताब्दी तक जैनागमों का अनुयोग के आधार पर विभाजन होता रहा है।[2] यह चार अनुयोग हैं :[3]–

### चरणकरणानुयोग

इस अनुयोग में आचार, व्रतचारित्र और संयम आदि विवेचन परक ग्रन्थ को रखा गया है। दिगम्बर परम्परा के ग्रन्थों में चरण व करण अनुयोगों को पृथक्-पृथक् लिया गया है। आचार्य समन्तभद्र की दृष्टि में जो लोकाकाश एवं अलोकाकाश जहाँ तक आकाश है वह लोक और उससे भिन्न अलोक कहलाता है।) के विभाग को, काल के परिवर्तन को और चारों गतियों के वर्णन को दर्पण के समान जानता है, बतलाया है वह सम्यग्ज्ञान करणानुयोग है और चरणानुयोग[4] वह है जो गृहस्थ और मुनियों के चारित्र की उत्पत्ति, वृद्धि और रक्षा के कारण भूत शास्त्र ज्ञान का सम्यक् प्रतिपादन करता हैं।[5]

चरणकरणानुयोग में आचारांगसूत्र, प्रश्नव्याकरणसूत्र, दशवैकालिकसूत्र, निशीथसूत्र, व्यवहारसूत्र, वृहत्कल्पसूत्र और आवश्यकसूत्र को रखा जा सकता है।

### धर्मकथानुयोग

धर्म के यथार्थस्वरूप को प्ररूपित करने वाली कथाओं का विवेचन जिन

1. संस्कृत हिन्दी कोष, पृ० 41
2. आव०नि०, 363-377
3. जैनागम०, पृ० 26
4. (क) लोकालोकविभक्तेर्युगपरिवृत्तेश्चतुर्गतीनां च।
आदर्शमिव तथामतिरवैति करणानुयोगं च।।
रत्न०, 44

(ख) उपासका०, 46/918
5. (क) गृहमेध्यनगाराणां चरित्रोत्पत्तिवृद्धिरक्षांगम्।
चरणानुयोगसमयं सम्यक्ज्ञानं विजानाति।।
रत्न०, 45

(ख) उपासका, 46/919

आगमों में मिलता है, वे धर्मकथानुयोग वर्ग में आते हैं। दिगम्बर परम्परा में धर्मकथानुयोग को प्रथमानुयोग बतलाया गया है।[1]

धर्मकथानुयोग में ज्ञाताधर्मकथासूत्र, उपासकदशांकसूत्र, अन्तकृद्दशांगसूत्र, अनुत्तरौपपातिकसूत्र, विपाकसूत्र, औपपातिकसूत्र, रायप्रश्नीयसूत्र, निरयावलिकासूत्र, कल्पावतंसिका, पुष्पिका और उत्तराध्ययन आदि ग्रंथों को ग्रहण किया जा सकता है।

### गणितानुयोग

इन अनुयोग में गणित एवं खगोल विद्या सम्बन्धी विषयों को प्रतिपादित करने वाले ग्रन्थों का समावेश मिलता है। इसमें जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्ति एवं चन्द्रप्रज्ञप्ति आदि ग्रन्थ आते हैं।

### द्रव्यानुयोग

छह द्रव्यों और नौ पदार्थों का यथार्थ विवेचन जिसमें पाया जाता है वे आगम ग्रन्थ द्रव्यानुयोग के अन्तर्गत आते हैं। दिगम्बर परम्परा के ग्रन्थों से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है।[2] इस अनुयोग में सूत्रकृतांगसूत्र, स्थानांगसूत्र, समवायांगसूत्र, व्याख्याप्रज्ञप्तिसूत्र, प्रज्ञापनासूत्र, नन्दीसूत्र, अनुयोगद्वार आदि ग्रन्थ सम्मिलित हैं।

### आगम विषयक दिगम्बर मान्यता

दिगम्बर आचार्यों द्वारा मान्य तत्त्वार्थसूत्र की वृत्ति में अंग प्रविष्ट और अंग बाह्य–इन दो भागों में आगमों का जो वर्गीकरण किया गया है, वह इस प्रकार है[3]–

1. (क) प्रथमानुयोगमर्थाख्यानं चरितं पुराणमपि पुण्यम्।
   बोधिसमाधिनिधानं बोधति बोधः समीचीनः।।
   रत्न०, 43
   (ख) उपासका०, 46/919
2. (क) जीवाजीवसुतत्वे पुण्यापुण्ये च बन्धमोक्षौ च।
   द्रव्यानुयोगदीपः श्रुतविद्यालोकमातनुते।।
   रत्न०, 46
   (ख) उपासका०, 46/919
3. त०वृ०, 1/20



आगम

| अंग प्रविष्ट | अंग बाह्य |
|---|---|
| आचार | सामायिक |
| सूत्रकृत | चतुर्विंशतिस्तव |
| स्थान | वन्दना |
| समवाय | प्रतिक्रमण |
| व्याख्या प्रज्ञप्ति | वैनयिक कृतिकर्म |
| ज्ञाताधर्मकथा | दशवैकालिक |
| उपासकदशा | उत्तराध्ययन |
| अन्तकृतदशा | कल्प व्यवहार |
| अनुत्तरोपपातिक | कल्पाकल्प |
| प्रश्न व्याकरण | महाकल्प |
| विपाक सूत्र | पुण्डरीक |
| दृष्टिवाद | महापुण्डरीक |
| | निषिद्धिका[1] |

दृष्टिवाद

| परिकर्म | सूत्र | प्रथमानुयोग | पूर्वगत | चूलिका |
|---|---|---|---|---|
| चन्द्रप्रज्ञप्ति | | | उत्पाद | जलगता |
| सूर्य " | | | अग्रायनीय | स्थलगता |
| जम्बूद्वीप " | | | वीर्यानुप्रवाद | मायागता |
| द्वीपसागर " | | | अस्तिनास्तिप्रवाद | आकाशगता |
| व्याख्या " | | | ज्ञानप्रवाद | रूपगता |
| | | | सत्यप्रवाद | |
| | | | आत्म " | |
| | | | कर्म " | |
| | | | प्रत्याख्यान | |
| | | | विद्यानुवाद | |
| | | | कल्याण | |
| | | | प्राणावाय | |
| | | | क्रियाविशाल | |
| | | | लोकबिन्दुसार | |

1. अंगबाह्य आगमों के नाम।
   गो०जी०, (367, 368), पृ० 96